इकाई 1 "भारतीय दर्शन और संगीत की अवधारणा"

सूची पत्र

1.1 भूमिका

1.2 पाठ का उद्देश्य

1.3 भारतीय दर्शन - एक परिचय

1.4 दर्शन और फिलॉसफी

1.5 भारतीय दर्शन के संप्रदाय

1.6 भारतीय दर्शन में संगीत शास्त्रों की भूमिका एवं विवेचना

1.7 संगीत शास्त्रों की भूमिका

1.8 भारतीय दर्शन में नाद एवं संगीत की महत्ता

1.9 दर्शन एवं धर्म के साथ संगीत की यात्रा

1.10 सारांश

1.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1.1 भूमिका

प्रिय विद्यार्थीयों, संगीत की निर्झरिणी तो अनंत से बहती हुई ब्रह्म तक पहुंचती है। इसी आधार पर प्रत्येक कलाकार अपनी कलाकृति या रचना की उत्कृष्टता में केवल परमात्मा को ही देखता है और यही सत्य समझता है। भारतीय दर्शन में यही सत्य, शिव है और वही अनंत सौंदर्य का स्वामी है। इसलिए संगीत को ब्रह्म विद्या भी कहा गया है और ईश्वर तथा उसकी महान कृति प्रकृति से उसका सामंजस्य स्थापित किया गया है। अनेक दार्शनिकों एवं बुद्धिजीवियों ने भी यह कहा है कि तर्क केवल बुद्धितत्व को परिष्कृत करके उसे निखारता है परन्तु वह उसी दायरे तक सीमित रहता है। इसके विपरित संगीत कला भावों को ही परिष्कृत नहीं करती, अपितु आत्मा को प्रफुल्लित कर उसे असीम तथा अलौकिक शांति प्रदान करती है। इसी संदर्भ में संगीत का दार्शनिक महत्व भी स्पष्ट हो जाता है।

दर्शन की इसी विचारधारा से संगीत द्वारा सद्भावना तथा साधु भाव उत्पन्न होते हैं जो कि धर्म और दर्शन के पावन स्तंभ के बुनियादी घटक है। शास्त्रीय संगीत दर्शन में निहित तथा व्यापक शब्द 'ब्रह्म' की अनुभूति और अभिव्यक्ति की ही विद्या है।

1.2 पाठ का उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद विद्यार्थी -

- भारतीय दर्शन तथा उसके विभिन्न संप्रदायों के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे
- भारतीय दर्शन में संगीत शास्त्रों की भूमिका तथा नाद एवं संगीत की महत्ता को समझ कर व्यक्त कर पाएंगे
- भारतीय दर्शन एवं धर्म के साथ संगीत की अविरल यात्रा को समझ सकेंगे

1.3 भारतीय दर्शन - एक परिचय

दर्शन शब्द दृश् धातु से बना है, जिसका अर्थ है देखना। भारत में दर्शन उस ज्ञान को कहा गया है जिससे तत्व का साक्षात्कार किया जा सके। इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए स्थूल दृष्टि की नहीं बल्कि सूक्ष्म दृष्टि की आवश्यकता होती है। सूक्ष्म दृष्टि का तात्पर्य है आंतरिक चिंतन मनन। इस आंतरिक चिंतन मनन के द्वारा ही उस तत्व के यथार्थ दर्शन अथवा उसका यथार्थ ज्ञान मिलता है।

मानव के दुखों की निवृति के लिए और तत्व ज्ञान कराने के लिए ही दर्शन शस्त्र का जन्म हुआ है । भारतीय दर्शन के अनुसार ह्रदय की गाँठ तभी खुलती है और शोक तथा संशय तभी दूर होते हैं जब सत्य का दर्शन होता है। मनु का कथन है कि सम्यक दर्शन प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बन्धन में नहीं डाल सकता तथा जिनको सम्यक दृष्टि नहीं है वे ही संसार के महामोह और जाल में फंस जाते हैं ।

इसका एक उदाहरण महाभारत में मिलता है जब महारथी अर्जुन मोह के जाल में पड़ जाता है तथा उसको अपने स्वजन, सखा, भाई, बंधु आदि दिखाई देने लगते हैं तब भगवान श्रीकृष्ण उसे दिव्य दृष्टि प्रदान करते हैं और अर्जुन की आंखें खुल जाती है। उसे विराट पुरुष, ब्रह्म, शिव आदि देवताओं के साथ-साथ सत्य असत्य, पाप पुण्य, राग वैराग्य इत्यादि सब कुछ दिखाई देने लगता है। इसलिए भारतीय दर्शन में तत्व ज्ञान की विभिन्न धाराओं में दुखों की निवृत्ति से सुख की प्राप्ति होती है और यही परम आनंद की भी प्राप्ति कहलाती है ।

1.4 दर्शन और फिलॉसफी

पाश्चात्य जगत में दर्शन के लिए फिलॉसफी शब्द प्रयोग किया गया है। किंतु दोनों एक नहीं बल्कि ग्रीक भाषा के दो शब्दों के योग से बने हुए हैं। फिलास और सोफिया इन दो शब्दों से मिलकर बना है फिलॉसफी। फिलॉस का अर्थ है प्रेम या अनुराग तथा सोफिया का अर्थ है ज्ञान। अर्थात ज्ञान के प्रति प्रेम होना फिलॉसफी है अथवा दर्शन है। भारतीय परिप्रेक्ष में दर्शन को उपनिषद में 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' – इन शब्दों से परिभाषित किया गया है जिस का गूढ अर्थ है किसी भी तत्व के मूल स्वरूप को देखना दर्शन है । मनुष्य के आंतरिक चेतन मन में स्वयं को जानने की प्रवृत्ति इस जगत मूल तत्व को जानने प्रवृत्ति रहती है जिसका समाधान दर्शन से ही प्राप्त होता है।

भारतीय दार्शनिकों के बारे में टी एस एलियट ने कहा था.

Indian philosophers' subtleties make most of the great European philosophers look like school boys.

अर्थात भारतीय दार्शनिकों की सूक्ष्म बोध को देखते हुए यूरोप के अधिकांश महान दार्शनिक स्कूल के बच्चों जैसे लगते हैं।

1.5 भारतीय दर्शन के संप्रदाय

वैदिक काल के बाद के काल को हम महाकाव्य काल भी कह सकते है जिसमें रामायण तथा महाभारत जैसे महाकव्य लिखे गये थे। जैन तथा बौद्ध धर्मो का विकास भी इसी काल में हुआ

था। उसके बाद के काल में भारतीय दर्शन के षड्-दर्शन का विकास हुआ। इस काल को सूत्र काल कहा जाता है।

भारतीय दर्शन को दो भागो में बाँटा जा सकता है - **आस्तिक एवम् नास्तिक दर्शन।** यहाँ आस्तिक शब्द का अर्थ ईश्वर में विश्वास करने से नहीं है और ना ही नास्तिक का अर्थ ईश्वर में विश्वास न करने से है। आस्तिक का अर्थ है जो वेदो में विश्वास रखता है या उनकी प्रामाणिकता को स्वीकार करता है तथा नास्तिक का अर्थ है जो वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार नही करता है। चार्वाक दर्शन, जैन दर्शन तथा बौद्ध दर्शन को नास्तिक दर्शन माना जाता है जबकि षड्-दर्शन यानि न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग तथा मीमांसा-वेदांत को आस्तिक माना जाता है।

भारतीय दर्शन में केवल चार्वाक दर्शन ही एक ऐसा दर्शन है जो हर तरह से नास्तिक है।

दर्शन की विभिन्न शाखाओं में योग दर्शन को संगीत के संदर्भ में सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। क्योंकि योग दर्शन का संबंध विशिष्ट प्रकार की साधना से है और इसी तरह संगीत कला में भी कलात्मक परिपक्वता की दृष्टि से साधना एवं अभ्यास का विशेष महत्व है। जिस तरह योग के 8 अंगों (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि) के द्वारा एक साधक चित्तवृत्तियों का नियंत्रण कर लेता है, उसी प्रकार संगीत साधना से भी परम ब्रह्म की प्राप्ति के लिए साधना एवं अभ्यास का दृष्टिकोण महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार योग साधना में उपास्य तत्व व उपासना का माध्यम 'अनाहत नाद' होता है, उसी प्रकार संगीत में उपास्य तत्व एवं उपासना का माध्यम 'आहत नाद' होता है । इसी नाद की अनुभूति एवं उसकी विभिन्न अवस्थाओं को पार करते हुए साधारण मनुष्य उस परमब्रह्म के दर्शन करता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि दर्शनशास्त्रों में भी कला के उसी रूप को उत्कृष्ट कला माना गया है जो सामान्य मनोरंजन मात्र के लिए न होकर परम आनंद की प्राप्ति करने में समर्थ हो ।

1.6 भारतीय दर्शन में संगीत शास्त्रों की भूमिका एवं विवेचना

संगीत के संदर्भ में दर्शन संबंधी विवेचन की सारगर्भिता को सिद्ध करने के लिए प्राचीन मनीषियों द्वारा शास्त्रों में उपलब्ध साहित्य सामग्री को ही सर्वोत्तम माना है। यह सामग्री प्रमाण देती है कि भारतीय संगीत सदा ही अध्यात्म एवं दर्शन की गोद में ही पल्लवित हुआ है ।

दर्शन और संगीत का परस्पर अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि इनका प्रत्यक्ष रूप से कोई संबंध नहीं है, परंतु परोक्ष रूप से यह एक दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं । दर्शन को जहां गूढ़, गंभीर, चिंतन प्रधान तथा नीरस विषय माना जाता है वही संगीत का मूल गुण ही रंजकता और माधुर्यपूर्ण है । जहां दर्शन का प्रत्यक्ष संबंध मानव मस्तिष्क से है, वहीं संगीत मानव हृदय में व्याप्त होता है अतएव भारतीय दर्शन आध्यात्मिक होने के कारण विभिन्न कलाओं तथा साहित्य पर प्रभावी होता है।

भारतीय दर्शन जीवन का दर्शन है तथा यह केवल बौद्धिक स्तर पर ही नहीं अपितु आध्यात्मिक स्तर पर भी परमब्रह्म की लक्ष्य तक पहुंचाने वाला पथ प्रदर्शक है। जहां साधारण दृष्टि केवल बाह्य चक्षुओं से देखता है, वही दार्शनिक दिव्य दृष्टि 'तत्व बोध' का ज्ञान कराती है अतएव, भारत के दर्शन में संगीत शास्त्र हमेशा से ही ब्रह्म चिंतन का विषय रहा है। बुद्धिजीवियों, मनीषियों तथा योगियों ने भी अपनी आंतरिक शक्तियों को ऊर्ध्वगामी बनाने में संगीत को सहायक माना है। दर्शन में संगीत को 'नाद योग' माना है। मूलाधार स्थित योनि में कुंडलिनी

शक्ति मानी गई है तथा वही शक्ति जीव की प्राण शक्ति है। कुंडलिनी शक्ति जब विभिन्न चक्रों को भेदती हुई जब ऊर्ध्वगति को प्राप्त होती है, तब अंतिम चक्र पार करने पर उसका 'शिवशक्ति' अथवा 'पर-ब्रह्म' से मिलन हो जाता है और यही स्थिति मोक्ष की होती है।

1.7 संगीत शास्त्रों की भूमिका

भारतीय दर्शनानुसार समस्त विद्याओं का केंद्र वेदों को माना गया है तथा यहीं से दर्शन तथा दर्शन सिद्धांतों का प्रतिपादन हुआ है। इस दृष्टि से वैदिक काल से ही भारतीय दर्शन एवं संगीत का पारस्परिक संबंध रहा है। वैदिक समय के सभी ग्रंथों जैसे वेदों, वेदों की उपशाखा- पुराणों, उपनिषदों, संहिताओं, शिक्षा ग्रंथों, ब्राह्मण ग्रंथों तथा महाकाव्यों (महाभारत, रामायण) आदि में संगीत में दर्शन का तथा दर्शन में संगीत का प्रभाव परिलक्षित होता है।

वेदों की संख्या चार मानी गई है - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

संगीत की प्रधानता सबसे ज्यादा सामवेद में ही मिलती है। ऋग्वेद एवं सामवेद में यज्ञ के उद्देश्य से प्रयुक्त 'संगीत' देवताओं की आराधना के लिए तथा परम तत्व के आह्वान के लिए प्रयुक्त किया जाता था। ऋग्वेद की रचनाओं के उच्चारण में यदि काव्यात्मक प्रभाव विशेष था तो सामवेद में गेयात्मक छंदों का विशिष्ट ज्ञान भी अति कौशल की अपेक्षा रखता था।

अथर्ववेद - ऋग्वेद के अध्ययन से ज्ञान की, यजुर्वेद के अध्ययन से उत्तम कर्म, सामवेद के अध्ययन से उत्तम पुरुष की उपासना की प्राप्ति होती है। इन तीनों वेदों से ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत अथर्ववेद के अध्ययन से मानव को आत्मज्ञान, बल, बुद्धि प्राप्त करने का मार्ग मिलता है। इसी कारण अथर्ववेद को ब्रह्मवेद तथा आत्मवेद कहा जाता है।

विद्वानों के अनुसार वेदों तथा शास्त्रों के संबंध में भी दो विद्याओं को जानना आवश्यक है। पहली 'परा विद्या' और दूसरी 'अपरा विद्या'। इनमें ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा कल्प, व्याकरण निरुक्त, छंद तथा ज्योतिष आदि विद्या अपरा है तथा इनसे जब उस परमपिता परमेश्वर का ज्ञान अथवा दर्शन होता है वह परा विद्या कहलाती है। पुराणों में भी वेदों की प्रमाणिकता के संदर्भ मिलते है।

भारतीय संगीत शास्त्र ब्रह्म विषयक ज्ञान की एक विकसित परंपरा है। भरतमुनि कृत **'नाट्यशास्त्र',**मतंगकृत**'वृहदेशी ग्रंथ'** औरशारंगदेव कृत**'संगीत रत्नाकर'** यह सभी ग्रंथ साधन प्रधान भी है और वेदांत के समान साध्य प्रधान भी है। भारतीय संगीत शास्त्रों पर मुख्य रूप से योगतंत्र, वेदांत तथा सांख्य का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। मतंग के वृहदेशी ग्रंथ में योग दर्शन का प्रभाव अधिक स्पष्ट दिखता है। इसमें उल्लिखित ध्वनि, बिंदु, नाद, मात्रा आदि सभी संज्ञाएं सीधे योग दर्शन से ही ली गई है।

भारतीय संगीत में 22 श्रुतियां माने जाने का आधार स्थूल नहीं अत्यंत सूक्ष्म है। इन्हें वैज्ञानिक स्थूल उपकरणों से अभी तक सिद्ध नहीं किया जा सका है, लेकिन योगिक प्रक्रिया तथा अंतः प्रेरणा के आधार पर भारतीय मनीषियों तथा ज्ञानियों ने सदियों पूर्व ही इन्हें सिद्ध करके दार्शनिक शैली में प्रतिपादित कर दिया था। श्रुतियों की संख्या,उनकी सार्थकता तथा उनकी जातियों का मतंग के बाद के अनेक ग्रंथों में भी उल्लेख मिलता है तथा यह भी योग दर्शन से प्रभावित है।

मतंग के बाद **संगीत रत्नाकर** ग्रंथ में भी नाद स्थान, नादोत्पत्तिविधि, नाद भेद, नादों के नाम तथा श्रुतियों की संख्या 22 ही होने का कारण, जिस शैली में बताया गया है वह शैली मूलतः योग से ही प्रभावित है। संगीत रत्नाकर ग्रंथ के बाद स्थान, श्रुति, जाति, कुल, देवता, ऋषि, छंद और रस के प्रकरण में ग्रंथकारों ने स्वरों के वर्ण, रंग, जाति की चर्चा भी योग शास्त्र के प्रभाव से ही हो पाई है।

'संगीत पारिजात' ग्रंथ में स्वरों के ऋषि, देवता, छंद तथा रंग आदि का वर्णन दार्शनिक शैली में ही किया गया है। इसके अनुसार षड़ज से निषाद तक सात स्वरों के ऋषि क्रमशः 'अग्नि, ब्रह्मा, चंद्रमा, विष्णु, नारद, तुम्बरु और कुबेर' है। 'अग्नि, ब्रह्मा, सरस्वती, शंकर, विष्णु, गणेश और सूर्य' क्रमशः सात सुरों के देवता है। 'अनुष्टुप, गायत्री, त्रिष्टुप, बृहती, पंक्ति, उष्णिक् तथा जगती' यह सात स्वरों के छंद कहे गए हैं। इसके साथ ही 'षड़ज स्वर कमल जैसा लाल, ऋषभ सुनहरे रंग की लालीयुक्त, गांधार पीला, मध्यम सफेद, पंचम काला, धैवत पीला और निषाद को बहुरंगी स्वर' बताया गया है।

वस्तुतः देखा जाए तो वेदो में बीज रूपेण, उपनिषदों में अंकुरित तथा षड़दर्शनों के रूप में पल्लवित 'परब्रह्मविषयक' चिंतन धारा भी संगीत के सहयोग के बिना अपूर्ण ही है। दर्शन ग्रंथों में बहुचर्चित ध्वनि सिद्धांत का उचित हल प्राप्त करने के लिए भी संगीत की सहायता नितांत अपेक्षित है।

1.8 भारतीय दर्शन में नाद एवं संगीत की महत्ता

वैदिक संस्कृति में भक्ति, संगीत एवं दर्शन का घनिष्ठ संबंध रहा है। स्वर ज्ञान परंपरा को ब्रह्म की उपासना के समान साध्य मानकर नाद की उपासना की गई है। नाद को उपास्य तत्व व उपासना का माध्यम स्वीकार करते हुए वेदों, शास्त्रों एवं उपनिषदों में नाद की महिमा का गुणगान किया गया है और इसी तरह संगीत के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक पक्ष की महत्ता को प्रमाणित किया गया है।

मंडुकोपनिषद में प्रणव योग एवं नादानुसंधान के संदर्भ में कहा गया है -

प्रणवों धुनः शरोहयात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्य मुच्यते।

इस उक्ति के माध्यम से ब्रह्म संबंधी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रणव योग और नादानुसंधान को श्रेष्ठ साधन स्वीकार किया गया है।

उसी प्रकार 'योगशिखोपनिषद' में कहा गया है -

नास्ति नादात्परो मंत्रों न देवः स्वात्यतः परः।

नादानुसंधान परः पूजा नहीं तृप्तः परं सुखम।।

इसका अर्थ यह है कि नाद से बड़ा कोई मंत्र नहीं है, आत्मा से बड़ा कोई देवता नहीं है, नादानुसंधान से बड़ी कोई पूजा नहीं है और तृप्ति से बड़ा कोई सुख नहीं है। इस प्रकार मन को ब्रह्म चिंतन की ओर लगाने तथा उसी में एकाकार करने के माध्यम में नाद को ही सर्वोपरि माना गया है। संगीत का आधारभूत तत्व नाद संपूर्ण जगत में व्याप्त है और यही सृष्टि का कारण है। इसलिए नाद को नादब्रह्म कहकर उपास्य तत्व व उपासना का साधन स्वीकार किया गया है।

हमारे प्राचीन विद्वानों ने शरीर के साथ-साथ आत्मा के भी विकास हेतु धर्म तथा दर्शन के मौलिक तत्वों को संगीत में सम्मिलित किया है। नाद के माध्यम से ब्रह्म साधना तथा ईश्वरीय उपासना को ही कला की सच्ची शक्ति माना है। अतएव भारतीय संगीत 'नाद-ब्रह्म' की उपाधि से सुशोभित है। इस त्रयमुखी विधा में-चाहे वह गान-मर्म हो, वाद्य-मर्म अथवा नर्तन-मर्म, सभी में अध्यात्मिक तत्व का पूर्ण समावेश है। कला की साधना ही इनका आत्म-धर्म है। इनमें साधक-संगीतज्ञ भक्ति के विभिन्न अवयवों से परमात्मा से संबंध स्थापित करता है। वह इन तीनों विधाओं में अलौकिक दिव्यता एवं आध्यात्मिकता का अनुभव करता है। शायद यही कारण है कि भगवान की भक्ति संगीत से सदैव सिद्ध होती आई है। जिस तरह संगीत ईश्वरीय सुंदरतम सृष्टि की मधुरतम अभिव्यक्ति है उसी तरह नाद ब्रह्म से एकाकार हो जाने की ऊर्ध्वमुखी साधना है। संगीत में डूबा संगीतकार नाद ब्रह्म की उपासना करता है और उसके लिए राग रागनियां, ताल, तान, स्वर, आरोह अवरोह आदि अभिव्यक्ति मात्र हो जाते है।

1.9 दर्शन एवं धर्म के साथ संगीत की यात्रा

दर्शन एवं धर्म का बहुत ही व्यापक रूप परम अलौकिक आनंद को प्राप्त करना है। परंतु किस तरह प्राप्त करना है अथवा किस मार्ग से प्राप्त करना है; यह हमेशा से गुणियों, बुद्धिजीवियों, ज्ञानियों एवं मुनियों के बीच एक चिंतन मनन का विषय रहा है। उसमें (ईश्वर) एक होने के मार्ग तो बहुत सारे हैं परन्तु यह सब धर्मों एवं दर्शनों में अलग अलग तरीके से बताया हुआ है।

संगीत एक क्रियात्मक कला है । साहित्य एवं शास्त्र भी इस कला का वर्णन करते हैं। अतः संगीत का साहित्य के साथ जुड़ा होने के कारण इसका एक मार्ग धर्म की ओर जाता है और दूसरा मार्ग दर्शन की ओर जाता है। संगीत शिक्षा एवं संगीत दोनों का ही एकमात्र लक्ष्य इसी व्यापक धार्मिक एवं दार्शनिक चेतना को विकसित करना है। भारत को कर्म भूमि व योग्य भूमि की संज्ञा दी जाती है क्योंकि प्रारंभ से ही हमारा देश अध्यात्मिक विषयपरक रहा है। इस आध्यात्मिक धरा पर जहां धर्म का संबंध प्रत्येक शुभ अशुभ कार्य में संपूर्णतया देखा जा सकता है, वहीं जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत मानव जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं जो संगीत से अछूता हो ।

संगीत द्वारा ईश्वर आराधना का मौलिक भाव वैदिक युग से ही भारत द्वारा संपूर्ण विश्व में फैला हुआ था। संगीत भक्ति का अविभाज्य अंग है तथा वह भक्ति के समान सनातन विचार है। भक्ति के समान संगीत भी एक ज्ञान, विचार, क्रिया एवं भावना अथवा इन सबका समन्वित रूप है। भारतीय दर्शन में परमतत्व अथवा बह्य को जानने के लिए जिस अध्यात्मवाद का प्रतिपादन हुआ, संगीत मनीषियों ने उस 'नाद' को बह्य की तरह नित्य कहकर उस परमतत्व को जानने के लिए नाद के दर्शन का विस्तार किया। भारतीय दार्शनिकों का मत है कि ईश्वर की प्रथम सृष्टि आकाश है और आकाश का प्रमुख गुण है - नाद, तथा संगीत शास्त्रों का संपूर्ण ज्ञान भी इसी नाद पर आधारित है। इस नाद के माध्यम से जीवन का परम लक्ष्य एकाकार में लीन होकर अखंड आनंद की प्राप्ति करना है और जिसकी प्राप्ति ही मोक्ष की प्राप्ति है।

सभी दशर्नों तथा धर्मों का अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है और अन्य कलाओं की ही तरह संगीत कला का भी चरम लक्ष्य परम आनंद और पूर्ण पार्थिव अवस्था की अनुभूति कराना है। मोह माया रूपी भवसागर से मुक्ति, आत्मा का परमात्मा से मिलन, परम शांति तथा अंततः मोक्ष प्राप्त करना ही उसका प्रमुख ध्येय माना गया है।

भारतीय दर्शन में इस मोक्ष धाम तक पहुंचने का सरलतम पथ है भक्ति। नारद ने भक्ति सूत्र में भक्ति को ज्ञान, कर्म तथा योग से अधिक श्रेयस्कर बताया है। इसके साथ ही आदि गुरु शंकराचार्य ने ज्ञान के लिए गुरु अथवा ईश्वर की शरणागति की आवश्यकता का प्रतिपादन करते हुए भक्ति का समर्थन किया है। भक्ति, भक्त के हृदय में उस परमशक्ति के प्रति जानने तथा उसका दर्शन करने की इतनी तीव्र इच्छा भर देती है कि सांगीतिक भक्ति द्वारा वह उसका दर्शन कर लेता है। साध्य एवं साधक के बीच तारतम्य स्थापित होने में भक्ति सहज मार्ग है। भक्ति के आचार्यों ने दर्शन के माध्यम से अनेक साधनों का उल्लेख भी किया है जिनमें भक्ति के नौ साधनों को विशेष रूप से प्रमुखता दी गई है। श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन ही भक्ति के पथ के साधन है। भक्ति के लिए कीर्तन की श्रेष्ठता स्वीकार होने के कारण प्राचीन समय से ही संगीत भक्ति पथ का प्रमुख साधन रहा है। अतः साध्य एवं साधन का अभूतपूर्व सामंजस्य एवं संबंध भक्ति और संगीत में स्वाभाविक रूप से दिखाई देता है और इसीलिए भारतीय दर्शन में धर्म और संगीत का अविभाज्य संबंध है।

1.10 सारांश

भारतीय दर्शन का मूल दुख की प्रतीति, उसके कारण की खोज, दुखों की व्याख्या, उसके निरोध के लिए मार्ग की खोज तथा उस मार्ग की विवेचना में है, जो मोक्ष प्राप्ति तक ले जाता है। इसके साथ ही संगीत भी साधक की चेतना को ऊपर उठाकर आत्मा उत्थान की चरम सीमा 'मोक्ष' तक पहुंचा देता है जो भारतीय दर्शन का अंतिम लक्ष्य है। दर्शन एवं दर्शनशास्त्रों को मानने वाले जिन संतों, महात्माओं, कवियों एवं ज्ञानियों ने सिर्फ इंसानियत को धर्म माना और उसका निर्वहन किया वह लोग अमर हो गए और जिन्होंने इंसानों के बनाए हुए धर्म को धर्म माना वह कहीं खो गए। इसीलिए दर्शन एवं धर्म की परिभाषा आज बहुत ही सकुचित और कुंठित हो गयी है।

1.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

संक्षिप्तवर्णनप्रश्न

प्रश्न 1 -भारतीय दर्शन का परिचय देते हुए इसके सम्प्रदायों का वर्णन कीजिये?

प्रश्न2 -भारतीय दर्शन में संगीत शास्त्रों की भूमिका का विवेचन करते हुए नाद की महत्ता का वर्णन कीजिये?

उत्तर 1 –दर्शन शब्द दृश धातु से बना है, जिसका अर्थ है जिसके द्वारा देखा जाए। भारत में दर्शन उस ज्ञान को कहा गया है जिससे तत्व का साक्षात्कार किया जा सके। मानव के दुखों की निवृति के लिए और तत्व ज्ञान कराने के लिए ही भारत में दर्शन का जन्म हुआ है। भारतीय दर्शन के अनुसार हृदय की गाँठ तभी खुलती है और शोक तथा संशय तभी दूर होते हैं जब एक सत्य का दर्शन होता है। मनु का कथन है कि सम्यक दर्शन प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बन्धन में नहीं डाल सकता तथा जिनको सम्यक दृष्टि नहीं है वे ही संसार के महामोह और जाल में फंस जाते हैं।

इस तत्व ज्ञान को प्राप्त करने के लिए स्थूल दृष्टि की नहीं बल्कि सूक्ष्म दृष्टि की आवश्यकता होती है। सूक्ष्म दृष्टि का तात्पर्य है आंतरिक चिंतन मनन। इस आंतरिक चिंतन मनन के द्वारा ही

उस तत्व के यथार्थ दर्शन अथवा उसका यथार्थ ज्ञान मिलता है।

भारतीय परिपेक्ष में दर्शन को 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' अर्थात दिव्य दृष्टि प्राप्त करना ही दर्शन को जानना है। क्योंकि मनुष्य के आंतरिक चेतन मन में स्वयं के प्रति जानने की प्रवृत्ति इस जगत को जानने में है। इसका एक उदाहरण महाभारत में मिलता है जब महारथी अर्जुन मोह के जाल में पड़ जाता है तथा उसको अपने स्वजन, सखा, भाई, बंधु आदि दिखाई देने लगते हैं तब भगवान श्रीकृष्ण उसे दिव्य दृष्टि प्रदान करते हैं और अर्जुन की आंखें खुल जाती है। इसलिए भारतीय दर्शन में तत्व ज्ञान की विभिन्न धाराओं में दुखों की निवृत्ति से सुख की प्राप्ति होती है और यही परम आनंद की भी प्राप्ति कहलाती है।

भारतीय दर्शन के संप्रदाय

वैदिक काल के बाद भारतीय दर्शन के षड्-दर्शन का विकास हुआ। इस काल को सूत्र काल कहा जाता है। भारतीय दर्शन को दो भागो में बाँटा जा सकता है **- आस्तिक एवम् नास्तिक दर्शन।** यहाँ आस्तिक शब्द का अर्थ ईश्वर में विश्वास करने से नहीं है और ना ही नास्तिक का अर्थ ईश्वर में विश्वास न करने से है। आस्तिक का अर्थ है जो वेदो में विश्वास रखता है या उनकी प्रामाणिकता को स्वीकार करता है तथा नास्तिक का अर्थ है जो वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार नही करता है। चार्वाक दर्शन, जैन दर्शन तथा बौद्ध दर्शन को नास्तिक दर्शन माना जाता है जबकि षड्-दर्शन यानि न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग तथा मीमांसा-वेदांत को आस्तिक माना जाता है।भारतीय दर्शन में केवल चार्वाक दर्शन ही एक ऐसा दर्शन है जो हर तरह से नास्तिक है।

दर्शन की विभिन्न शाखाओं में संगीत के संदर्भ में योग दर्शन को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। क्योंकि योग दर्शन का संबंध विशिष्ट प्रकार की साधना से है और इसी तरह संगीत कला में भी कलात्मक परिपक्वता की दृष्टि से साधना एवं अभ्यास का विशेष महत्व है। संगीत साधना में भी परम आनंद की प्राप्ति के लिए साधना एवं अभ्यास का दृष्टिकोण महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार योग साधना में उपास्य तत्व व उपासना का माध्यम 'अनाहत नाद' होता है, उसी प्रकार संगीत में उपास्य तत्व एवं उपासना का माध्यम 'आहत नाद' होता है। इसी नाद की अनुभूति एवं उसकी विभिन्न अवस्थाओं को पार करते हुए साधारण मनुष्य उस परमब्रह्म के दर्शन करता है।

उत्तर 2 –वैदिक काल से ही भारतीय दर्शन एवं संगीत का पारस्परिक संबंध रहा है। वैदिक समय के सभी ग्रंथों जैसे वेदों, वेदों की उपशाखा- पुराणों, उपनिषदों, संहिताओं, शिक्षा ग्रंथों, ब्राह्मण ग्रंथों तथा महाकाव्यों (महाभारत, रामायण) आदि से संगीत में दर्शन का तथा दर्शन में संगीत का प्रभाव परिलक्षित होता है।सर्वप्रथम ऋग्वेद एवं सामवेद में यज्ञ के उद्देश्य से प्रयुक्त 'संगीत' देवताओं की आराधना के लिए तथा परम तत्व के आह्वान के लिए प्रयुक्त किया जाता था । उसके बाद अन्य ग्रंथोंजैसे 'नाट्यशास्त्र', 'वृहदेशी ग्रंथ' 'संगीत रत्नाकर' तथा 'संगीत पारिजात' में भी नाद तथा संगीत के बारे में विस्तार से बताया है।

भारतीय दर्शन में नाद एवं संगीत की महत्ता

वैदिक संस्कृति में भक्ति, संगीत एवं दर्शन का घनिष्ठ संबंध रहा है। स्वर ज्ञान परंपरा को ब्रह्म की उपासना के समान साध्य मानकर नाद की उपासना की गई है। नाद को उपास्य तत्व व उपासना का माध्यम स्वीकार करते हुए वेदों, शास्त्रों एवं उपनिषदों में नाद की महिमा का गुणगान किया गया है और इसी तरह संगीत के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक पक्ष की महत्ता को प्रमाणित किया

गया है।

उसी प्रकार 'योगशिखोपनिषद' में कहा गया है -

नास्ति नादात्परो मंत्रों न देवः स्वात्यतः परः।

नादानुसंधान परः पूजा नहीं तृप्तः परं सुखम।।

इसका अर्थ यह है कि नाद से बड़ा कोई मंत्र नहीं है, आत्मा से बड़ा कोई देवता नहीं है, नादानुसंधान से बड़ी कोई पूजा नहीं है और तृप्ति से बड़ा कोई सुख नहीं है। इस प्रकार मन को ब्रह्म चिंतन की ओर लगाने तथा उसी में एकाकार करने के माध्यम में नाद को ही सर्वोपरि माना गया है। संगीत का आधारभूत तत्व नाद संपूर्ण जगत में व्याप्त है और यही सृष्टि का कारण है। इसलिए नाद को नादब्रह्म कहकर उपास्य तत्व व उपासना का साधन स्वीकार किया गया है।

हमारे प्राचीन विद्वानों ने शरीर के साथ-साथ आत्मा के भी विकास हेतु धर्म तथा दर्शन के मौलिक तत्वों को संगीत में सम्मिलित किया है। नाद के माध्यम से ब्रह्म साधना तथा ईश्वरीय उपासना को ही कला की सच्ची शक्ति माना है। अतएव भारतीय संगीत 'नाद-ब्रह्म' की उपाधि से सुशोभित है। इस त्रयमुखी विधा में-चाहे वह गान-मर्म हो, वाद्य-मर्म अथवा नर्तन-मर्म, सभी में अध्यात्मिक तत्व का पूर्ण समावेश है। कला की साधना ही इनका आत्म-धर्म है। इनमें साधक-संगीतज्ञ भक्ति के विभिन्न अवयवों से परमात्मा से संबंध स्थापित करता है। वह इन तीनों विधाओं में अलौकिक दिव्यता एवं आध्यात्मिकता का अनुभव करता है। शायद यही कारण है कि भगवान की भक्ति संगीत से सदैव सिद्ध होती आई है। जिस तरह संगीत ईश्वरीय सुंदरतम सृष्टि की मधुरतम अभिव्यक्ति है उसी तरह नाद ब्रह्म से एकाकार हो जाने की ऊध्वमुखी साधना है। संगीत में डूबा संगीतकार नाद ब्रह्म की उपासना करता है और उसके लिए राग रागनियां, ताल, तान, स्वर, आरोह अवरोह आदि अभिव्यक्ति मात्र हो जाते है।